हरिहर शास्त्री जी अनन्तपुर के एक वकील थे। वे बड़े कट्टर सनातनी थे। यानी वेष-भूषा और आचार-व्यवहार में वे बड़ों की लकीर पीटते थे। देखिए न, वकालत में उन्होंने बहुत नाम और लाखों रुपए कमाए। पर अपने सिर पर चुटिया बनाए रखी। छुटपन में न जाने कब चुटिश रखी। फिर उन्होंने अनेकों के अनुरोध करने पर भी न कटाई। इस तरह धर्माचार का वे जिस कट्टरता से पालन करते, अपने घर वालों से भी उसी कट्टरता से पालन करवाते थे। उनके बैजनाथ नाम का पन्द्रह बरस का एक लड़का था। वह बहुत चालक और चलता-पुर्जा था। नवीं श्रेणी में पढ़ रहा था। क्लास में उसका हमेशा अव्वल नम्बर रहता था। इसलिए सभी उसकी प्रशंसा करते थे। जमाना बदल जाने के कारण सब लड़कों ने अपनी अपनी चुटिया कटा कर बाल बढ़ा लिए थे।

लेकिन वैद्यनाथ अपने पिता की तरह चुटिया का झण्डा ऊँचा किए था। उसके साफ मुण्डे हुए, चिकने सिर पर छः अंगुल लम्बी, घनी चोटी शोभा देती थी। यह देख कर उसकी श्रेणी के लड़के सभी उसका खूब मजाक उड़ाया करते थे।

लेकिन बैजनाथ उनकी बातें अनसुनी कर जाता और कोई परवाह न करता। कोई दूसरा होता तो जरूर चिढ़ जाता और उनसे लड़ बैठता। लेकिन यह बैजनाथ के स्वभाव के प्रतिकूल था। सचमुच वह बड़ा सहन-शील लड़का था।

लेकिन एक दिन उसके सहपाठी रामनाथ ने जो उसके पड़ोस में रहने वाला था और उसका गहरा दोस्त भी था, "जा बे! चुटिया वाले!" कह कर उसकी चुटकी ली। अगर यही बात किसी दूसरे के मुँह से निकली होती तो बैजनाथ उसकी कोई परवाह नहीं

मुहम्मद शफी

करता। लेकिन रामनाथ को ऐसा कहते सुन कर बैजनाथ को बड़ा दुख भी हुआ और क्रोध भी आया।

धीरे धीरे दोनों में झगड़ा हुआ। अन्त में बैजनाथ ने गुस्से में आकर अपनी पूरी ताकत से रामनाथ की नाक पर दो मुक्के जमा दिए और वहाँ से भाग गया।

"अच्छा ! देखूँगा, तू कहाँ जाता है। इस बार जब मौका मिलेगा तो बच्चू ! तेरी चुटिया उखाड़ लूँगा।" यह कह कर रामनाथ ने भी घर की राह पकड़ी।

इतने में छुट्टियाँ आ गईं। रामनाथ को अपने माँ-बाप के साथ रिश्तेदारों के गाँव जाना पड़ा। वे भोर को आने वाली पासिंजर में जाने की सोच कर तड़के ही स्टेशन पर जा पहुँचे।

गाड़ी आई और वे लोग चढ़ गए। माँ-बाप नीचे की बेंच पर सो गए और रामनाथ डिब्बे में सामान रखने के तख्त पर बिस्तर बिछा कर आराम से लेट गया। बोड़ी देर में उसे गाढ़ी नींद आ गई। नींद में ही रामनाथ उठ बैठा। उसने आँख खोले बिना ही नजदीक ही उटकती हुई रेल रोकने वाली जञ्जीर पकड़ कर खींच लें। तिस पर दाँत पीसते हुए कहने लगा-"बच्चू ! अब देखता हूँ, तू कैसे बच कर जाएगा। आ गई न तेरी चुटिया मेरे हाथ।" उसके इस तरह जञ्जीर पकड़ कर खींचते ही तुरन्त रेल रुक गई।

रामनाथ की बातों और उसकी इस चेष्टा का रहस्य किसी की समझ में न आया। इतने में गार्ड, ड्राइवर और रेल की पुलिस के कुछ आदमी जल्दी जल्दी आकर उस डिबे में चढ़ गए। जञ्जीर किसने खींची है ?" उन्होंने पूछा।

यह देख कर रामनाथ के माता-पिता बहुत घबराने लगे। इस गड़बड़ी में शायद

रामनाथ की नींद टूट गई। वह अभी तक जञ्जीर हाथ में ही पकड़े हुए था। "पिताजी! यह कौन सा स्टेशन है !" उसने अपने पिता से पूछा।

रामनाथ का पिता बेचारा बिलकुल न समझ पाया था कि उसके लड़के ने जञ्जीर क्यों खींची। "बेटा ! तुमने जञ्जीर क्यों खाँची ? तिस पर तुम नींद में क्या गुनगुना रहे थे ? क्या तुम कोई बुरा सपना देख रहे थे !" उसने अपने बेटे से पूछा।

तब रामनाथ ने हड़बड़ा कर अपने हाथ की जञ्जीर देखी। अब तक वह उसे बैजनाथ की चुटिया ही समझ रहा था। अब उसे मालूम हुआ कि उसने जञ्जीर खींच कर रेल-गाड़ी रोक ली है। इतने में उसकी माँ ने उसे पुचकार कर पूछा कि बात क्या है ?

तब रामनाथ ने अपने सपने की बात बताई। उसने कहा-"हमारे पड़ोस में हरिहर शास्त्री है न! उनके लड़के बैजनाथ से मेरा झगड़ा हो गया। मैंने उसे "जा वे! चुटिया वाले।" कह कर चिढ़ाया। वह मुझे दो मुक्के मार कर भाग गया। सपने में फिर वह मुझे

दिखाई दिया। यही नहीं, उसकी चुटिया भी मेरे हाथ लग गई। बस, मैंने इतने जोर से खींचा कि उखड़ कर मेरे हाथ आ जाए। ऐसा अच्छा मौका भला मैं हाथ से कैसे जाने देता? उसकी बात सुन कर मुसाफिर और गार्ड आदि भी हँसने लगे। इतने में एक आदमी ने उसका फोटो भी खींच लिया। यह देख कर रामनाथ के माँ-बाप और भी घबरा गए ।

तब गार्ड ने उन्हें बताया-"आज समझ लीजिए कि हम सबकी तकदीर अच्छी है। अगर आपके लड़के ने जञ्जीर न खींच ली होती

तो रेल उलट जाती। क्योंकि थोड़ी दूर पर कुछ बदमाशों ने रेल की पटरी हटा दी थी। इस छोटे लड़के के सपना देखने के कारण हम सब की जान जोखिम से बच गई। एक तरह से यह सब भगवान की लीला है। भगवान की लीला बड़ी विचित्र है। देखिए न ! मामूली तौर पर रेल के कानून के मुताबिक लड़के के यह जञ्जीर खींचने के कारण आपको पचास रुपए जुर्माना देना पडता। लेकिन आज उल्टे रामनाथ के जञ्जीर खींचने के कारण एक सौ सोलह रुपए का ईनाम दिया जाएगा। इतना ही नहीं, इसका फोटो भी खींच कर सभी पत्रों को भेजा जाएगा।"

गार्ड की बातें सुनकर मुसाफिर सभी इतने खुश हो गए कि वे सभी रामनाथ को दुलारने लगे।

दूसरे दिन रामनाथ की कहानी उसके फोटो सहित सभी बड़े बड़े पत्रों में छप गई। छुट्टियाँ खतम होते ही रामनाथ पढ़ाई के लिए अपने गाँव लौट आया।

स्कूल के मास्टरों, लड़कों सभी ने उसे चारों ओर से घेर लिया। सभी उसकी किस्मत की तारीफ करने लगे।

इतने में बैजनाथ भी वहाँ आया। "रामू ! तुमको गुस्सा दिला कर, सपने में दर्शन देकर, तुमसे जञ्जीर खिंचवा कर इतना यश मिलने का मूल कारण तो मेरी चुटिया है न ? फिर तुमने मेरी चुटिया का फोटो न छपवा कर अपना फोटो क्यों छपवाया सभी पत्रों में !" हँसते हुए बैजनाथ ने पूछा।

उसकी बात सुन कर सभी हँसने लगे। फिर बैजनाथ और रामनाथ दोनों दोस्त हाथ मिलाए, खुशी खुशी खेलने चले।

कई हजार साल पहले आवस्ती नगर पर दानशील नाम का एक राजा राज करता था। आस-पास के सभी राजाओं में दानशील ही बड़ा था। उसके पास कई लाख की एक सेना थी। दास-दासियों की तो गिनती ही न थी। उस राजा का खजाना लालों, हीरो आदि अनेक बहुमूल्य मणियों और सोने चाँदी के ढेरों से भरा हुआ था। उसकी सबसे बड़ी खुशनसीबी तो यह थी कि उसकी रानी कान्तिरेखा बहुत ही सुन्दरी और सुशीला भी।

इस तरह चारों ओर से ऐश्वर्य में लोटते रहने पर भी उसके मन में नाम को भी घमण्ड न था। वह गरीबों पर बहुत दया करता था। ईश्वर के प्रति उसके मन में बहुत भक्ति थी। दान-धर्म यह करता ही था। कोई भी उसके पास आकर खाली हाथ नहीं लौट जाता था। इसी से उस राजा का दानशील नाम सार्थक हुआ।

इस तरह कुछ दिन तक सुख से समय बिताने के बाद उस राजा के सिर पर अचानक एक आफत आ पड़ी। उसकी रानी कान्तिरेखा जो हमेशा स्वस्थ रहती थी, अचानक स्वर्ग सिधार गई। राजा के सिर पर तो मानो बिजली टूट पड़ी। प्रजा के दुख का भी कोई ठिकाना न था। लेकिन रोने से क्या फायदा था? मरी हुई रानी को फिर कौन लौटा ला सकता था।

और कुछ दिन बीत गए। राजा और प्रजा दोनों धीरे धीरे मरी हुई रानी को भूल गए। अब उन सब के मन में एक ही चिन्ता थी। बात यह थी कि राजा के कोई

सन्तान न थी। रानी निस्सन्तान ही इन्तकाल फ़रमा गई थी।

राजा के बाद राज दुश्मनों के हाथ में न पड़ जाए, इसके लिए यह जरूरी या कि राजा फिर विवाह कर ले। इसलिए मन्त्रियों और दरबारियों ने मिल कर राजा से प्रार्थना की कि वह दूसरा व्याह कर ले।

राजा को उनकी बात माननी ही पड़ी। एक शुभ मुहूर्त में राजा ने फिर व्याह कर लिया। लेकिन न जाने, उस राजा की नसीब कैसी बदल गई थी कि दूसरी रानी भी थोड़े ही दिन में स्वर्ग सिधार गई।

यह खबर उस राज के लोगों में फैल गई और धीरे धीरे उनके द्वारा आस-पास के राजों में भी फैल गई।

मन्त्रियों और दरबारियों ने किसी तरह गिड़गिड़ा कर राजा को तीसरा याद करने के लिए राजी किया। लेकिन इसमें एक मुश्किल थी। राजा से व्याह करते ही रानियों एक एक कर मर जाती थीं। यह देखते देखते कौन पिता अपनी लड़की का गला इस तरह घोटने को तैयार होता! राज-वंश वालों की बात तो दूर रही मामूली घराने वाले भी राजा को लड़की देने को राजी न होते थे। लेकिन मन्त्रियों ने और दरबारियों ने अपनी लगन न छोड़ी। वे देश के कोने कोने में लड़की की खोज करते ही रहे। यों बहुत दिनों तक खोजने के बाद आखिर उन्हें एक ऐसी गरीबिन मिली जो राजा को अपनी लड़की देने को तैयार हो गई। वह लड़की गरीब पराने में पैदा हुई थी; फिर भी सुन्दरता में किसी राजकुमारी से कम न थी। उस लड़की का सुन्दर रूप देख कर मन्त्रियों और दरबारियों की खुशी का ठिकाना न रहा।

उन्होंने तुरन्त आकर राजा को यह खबर सुनाई।

राजा को यह जान कर दुख नहीं हुआ कि वह एक गरीब घराने की लड़की से ब्याह करने जा रहा है।

उलटे उसे बहुत खुशी हुई। उसने मन्त्रियों से कहा-"मौत गरीब और अमीर का फरक नहीं जानती। मैं इतने बड़े राज का स्वामी होकर भी अपनी रानियों को न बचा सका। जिसकी नसीब में जितने बरस तक जीना लिखा होता है वह उतने ही दिन जीता है। इसलिए मुझे उस गरीबिन की लड़की से ब्याह करने में जरा भी ऐतराज नहीं।"

यह सुन कर मन्त्रीगण बहुत खुश हुए। उन्होंने मुहर्त निश्चय करके राजा के तीसरे ब्याह की तैयारियाँ शुरू कर दी।

लेकिन हरेक के मन में यह आशङ्का भी कि कहीं यह लड़की राजा से व्याह होने के पहले ही न मर जाए। क्योंकि राजा की दो गनियाँ ब्याह होने के एक हफ्ते के अन्दर ही स्वर्ग सिधार गई थीं।

पर इस बार ऐसा नहीं हुआ। धीरे-धीरे दिन, हफ्ते और महीने बिना किसी खटके के बीत गए। तब राजा, भजा और मन्त्रियों के मन में जान आई।

उस दिन से उस राज के सब लोग मन ही मन भगवान से सिर्फ एक ही पार्थना करने लगे कि "भगवान! कम से कम इस तीसरी रानी के गर्भ से हमारे राजा को सन्तान दो !"

शायद भगवान ने उनकी प्रार्थना सुन ली। क्योंकि दो महीने के अन्दर राज के लोगों को मालूम हो गया कि रानी के गर्भ रह गया है। अब लोगों की खुशी का ठिकाना न रहा। राजा और उसके दरबारियों का तो कहना क्या था। खैर !

नवाँ महीने बीतने के बाद एक शुभ मुहूर्त में रानी पद्मा के एक ही साथ तीन सन्तान पैदा हुई। सब लोग बड़ी आशा लगाए बैठे थे कि राजा के पराक्रमी लड़का पैदा होगा। लेकिन तीनो लड़कियों ही थी। कुछ लोगों को निराशा हुई।

लेकिन राजा के मन में कोई सोच न था। उसने सोचा -"क्या हर्ज़ है ? में इन्हीं को लड़के मान लूँगा। उन तीनों लड़कियों को राजा और रानी बड़े प्रेम से पालने पोसने लगे।

माँ-बाप ने लड़कियों के नाम क्रम से सुहासिनी, सुभाषिणी और सुकेशिनी रखें। लडकियाँ ज्यों ज्यों बड़ी होने लगी त्यों-त्यों उनकी सुन्दरता और भी खिलने लगी। उन्हें देख कर हरेक कहने लगा -"राजा की एक एक लड़की दस दस राजकुमारों के बराबर है।"

इस तरह आनन्द से दिन बीतते रहने पर भी राजा और रानी के लिए बीच

बीच में खटका पैदा हो जाया करता था। क्योंकि राजा की तीनों लड़कियों में से कोई न कोई हमेशा खतरे में पड़ जाया करती। लेकिन हर बार जान बच जाती।

एक बार मुहासिनी अपने पिता के साथ बाग में टहल रही थी कि एक बड़ा साँप इसे काटने दौड़ा। ऐन मौके पर राजा ने तलवार खींच कर उस साँप के दो टुकड़े कर दिए। नहीं तो सुहासिनी की खैर न थी। दूसरी बार सुभाषिणी अपनी माँ के साथ नदी किनारे टहलने गई। अचानक नदी किसी जादू से उमड़ पड़ी और मुमापिणी को पानी में बहा ले गई। एक धीवर ने जो वहीं मछलियाँ पकड़ रहा था, रानी का चिल्लाना सुना और तुरन्त पानी में कूद कर किसी न किसी तरह सुभाषिणी की जान बचाई। अगर उस दिन समय पर धीवर वहाँ न होता तो सुभाषिणी को अपनी जान से हाथ धोना पड़ता।

इसी तरह और एक बार तीसरी लड़की सुकेशिनी भी सङ्कट में फँस गई। बात यों हुई कि एक दिन तीनों लडकियाँ बाग में
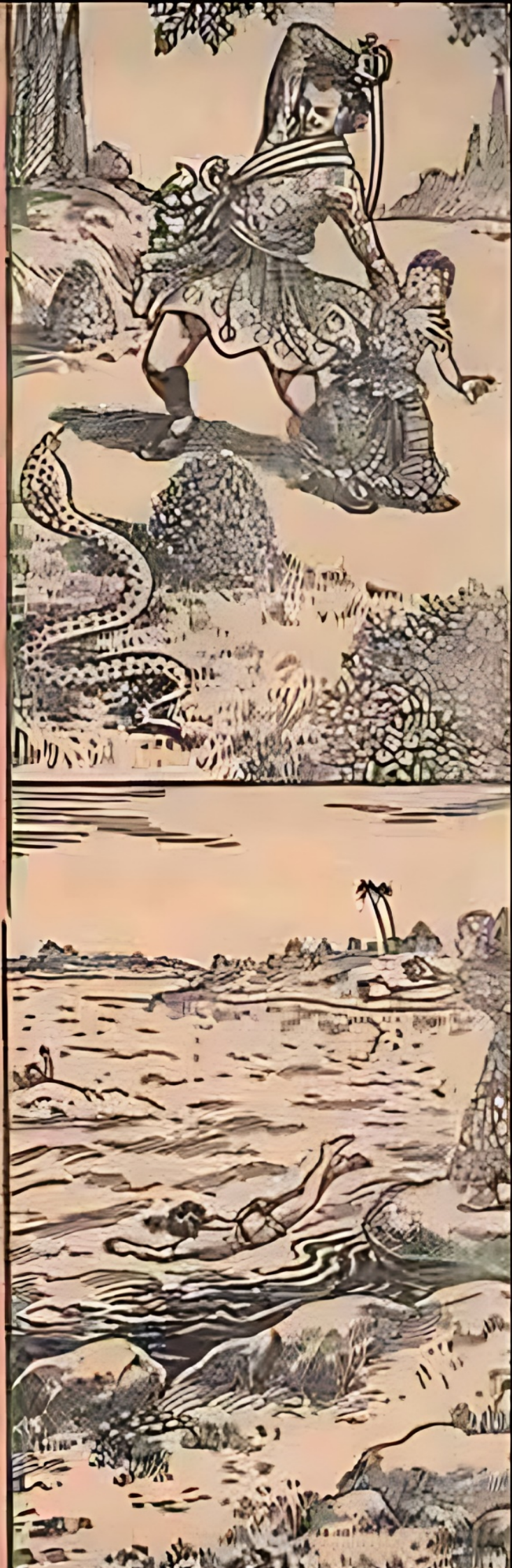
फूल तोड़ने गई। तीनों तीन टोकरियों में फूल भर कर महल को लौटने लगीं। सब से आगे सुभाषिणी चल रही थी और उसके पीछे सुहासिनी। सुकेशिनी सबसे पीछे चल रही थी। अचानक सुकेशिनी जोर से चीख कर बेहोश हो गई।

तुरन्त दोनों बहनें सहमी हुई महल में दोड़ी गई और माँ से जाकर यह खबर सुनाई। माँ उनको साथ लेकर दौड़ी हुई बाग में सुकेशिनी के पास आई तो उसने देखा कि सुकेशिनी बेहोश पड़ी है। उसके चारों ओर टोकरी के फूल छितरे हुए हैं और उन फूलों के बीच में एक बिच्छू रेङ्ग रहा है। तब रानी को मालूम हुआ कि उस बिच्छू के डङ्क मारने के कारण ही सुकेशिनी बेहोश हो गई है। उसने तुरन्त बिच्छू को मार डाला और मुकेशिनी को उठा कर महल में ले आई। वैद्यजी को खबर भेजी गई और उन्होंने आकर तुरन्त दवा की। थोड़ी देर बाद सुकेशिनी को होश आया और वह फिर बोलने चालने लगी।

इस तरह अपनी प्राण-प्यारी लड़कियों में से किसी न किसी की जान हर दम खतरे में देख कर राजा बेचैन हो उठा।

आखिर एक रोज उसने एक ज्योतिषीजी को बुला कर अपनी तीनों लडकियों के जन्म चक्र दिखलाए ।

ज्योतिषी जब मन ही मन लम्बा-चौड़ा हिसाब लगाते हुए बहुत देर तक चुप हो रहा तो राजा के मन की घबराहट और भी बढ़ गई।

"आप हिचकिचाइए नहीं। जो बात हो साफ साफ कह दीजिए। मैने तो सच्ची बात जानने के लिए ही आपको बुलवाया

है। उसने उदास होकर उन ज्योतिषीजी से कहा।

तब ज्योतिषी ने यों बताया-"आपकी लडकियाँ आगे चल कर बहुत सुन्दरी होगी। उनकी सुन्दरता की प्रशंसा सारे संसार में फैल जाएगी। लेकिन दुख की बात यह है कि उनका अलौकिक सौन्दर्य ही उनका शत्रु बन गया है। जन्म से ही हमेशा इन पर कोई न कोई सङ्कट आते ही........" यह कहते कहते वह कुछ सोच कर थोड़ी देर तक चुप हो गया।

ज्योतिषी की एक एक बात राजा के दिल को टुकड़े टुकड़े कर रही थी। उसकी आँखों से आँसुओं की धार वह चली थी। यह देख कर ही ज्योतिषी और कुछ कहने का साहस न कर सका था। लेकिन थोड़ी देर में राजा ने अपने आँसू पोछकर ज्योतिषी जी से उनकी बात पूरी करने का अनुरोध किया। "आप हिचकिचाइए नहीं। मुझे सची बात बता दीजिए।" उसने कहा।

"मुझे बड़ा अफसोस है कि में नाहक आपके मन को दुख दे रहा हूँ।" ज्योतिषी ने कहा।

"आप फिक्र न कीजिए। सच्ची बात जानने से मुझे अपनी प्यारी लड़कियों की रक्षा में सुविधा होगी। इसलिए आप कुछ भी चिन्ता न कीजिए।" राजा ने कहा।

ज्योतिषी ने फिर कहना शुरू किया-"सात बरस पूरे होने तक राजकुमारियों की जान हमेशा खतरे में रहेगी। हमेशा उन पर कोई न कोई सङ्कट आते ही रहेंगे। लेकिन सात बरस बाद ये सब सङ्कट पार करने पर फिर कोई खतरा न रहेगा। इसलिए सात बरस

की अवधि पूरी होने तक जी-जान से इन कुछ लड़कियों की देख-भाल करनी होगी। इसके अगवा जन्मपत्री में और कोई विशेषता नहीं है।" ज्योतिषी ने अपनी बात पूरी की।

राजा ने ज्योतिषी का बहुत सत्कार करके अनेकों इनाम देकर उन्हें भेज दिया। फिर उसने रानी के पास आकर बड़े दुख के साथ ज्योतिषी की बातें सुनाई। सुनते ही रानी मूर्छित हो गई। आखिर दासियों के बहुत सेवा करने पर रानी को होश आया। राजा उसे धीरज बँधा ही रहा था कि इतने में कुछ लड़कियों ने दौड़ते हुए आकर खबर दी -"हुजूर! तीनों राजकुमारियाँ बाग में बेहोश हो गई हैं।"

तुरन्त चारों ओर नीख-पुकार मच गई। रानी घबरा कर बाग की ओर दौड़ी। दासियाँ भी उसके साथ दौड़ी। राजा ने पहले बैद्यजी को खबर भेज दी और खुद भी बाग की ओर दौड़ पड़ा।

[तीनों लड़कियों के बेहोश हो जाने का क्या कारण था ? उसके बाद क्या हुआ ? आदि बातें अगले महीने पढ़ कर आनन्द उठाइए।]

किसी जङ्गल में एक मुनि तप करता रहता था। उनका नाम किसी को मालूम न था। लेकिन सब लोग जानते थे कि वह हमेशा सच ही बोला करता है। इसलिए उसके स्वभाव के अनुसार उसका सत्यकेतु नाम पड़ गया और धीरे धीरे उसका यह नाम चारों ओर प्रसिद्ध हो गया।

सत्यकेतु कभी झूठ बोलता ही न था। इसके अलावा यह संसार के किसी भी जीव को कष्ट देना न जानता था। पेड़ों के फल तोड़ने से पेड़ों को कष्ट होगा, यह सोच कर वह पक कर जमीन पर गिरे पड़े फल ही खाता था। बछड़ों को दूध से बञ्चित करना नहीं चाहता था। इसलिए वह झरनों का स्वच्छ जल ही पीकर दिन बिताता था। सत्यकेतु के प्राणों में अहिंसा आ बसी थी। एक दिन सत्यकेतु अपने आश्रम में कुशासन पर बैठा माला लेकर जप रहा था कि इतने में एक जङ्गली सूअर दौड़ता आया और नजदीक की एक झाड़ी में घुस गया। उस सूअर का सारा बदन लहू-लहान हो रहा था।

सत्यकेतु ने निश्चय कर लिया कि जरूर किसी न किसी शिकारी ने उसे अपने तीर का निशाना बनाया।

उसने सोचा- 'बेचारा यह जीव एक ही चोट से लहू-लुहान होकर सहमा हुआ जान बचाने के लिए भाग आया। यह ब्याध तो जरूर इसका पीछा करता होगा ! अब कैसे इसकी जान बचाई जाए।" यह सोच कर सत्यकेतु उसकी जान बचाने के उपाय सोचने लगा।

इतने में एक शिकारी वहाँ आ धमका। उसका सारा बदन कोयले की तरह काला-कलूटा था। उसकी आँखें अङ्गारों की तरह जल रही थीं। झाड़ी-सी उगी उसकी मूछें

स्नेहलता देवी

देखते ही डर लगता था। उस लम्बे डील-डौल वाले शिकारी ने बड़ी विनय से मुनि को नमस्कार किया और कहा -"मुनि महाराज ! बया इधर से कोई घायल सूअर आया है ! आपने उसे देखा हो तो दया कर बता दीजिए।"

जब मुनि कुछ नहीं बोले तब उस ब्याध ने बिषाद के साथ कहा- "महाराज ! न जाने आज किसका मुँह देख कर उठा था कि सारा जङ्गल छान डाला; पर कहीं कोई शिकार नहीं मिला। आखिर हताश होकर लौट ही आ रहा था कि एक जङ्गली सूअर सामने आया। मैंने उस पर तीर छोड़ा। पर निशाना ठीक न बैठा और यह घायल जानवर धू-धू करता इधर ही भागा। मैं इसे मार कर शहर में इसका मांस बेचता और अपना और अपने घर बालों का पेट भरता। लेकिन अब तो हमें भूखा ही रहना पड़ेगा ! सच कहता हूँ मुनिजी। तीन दिन से घर में चूल्हा नहीं जला है। अगर आज यह सूअर भी हाथ न लगा तो हम सबको भूखों मरना होगा। इस तरह यह व्याध बड़े दीन स्वर से अपनी राम-कहानी सुनाने लगा।

अब तक तो सत्यकेतु का मन सूअर पर ही पिघल रहा था। लेकिन ब्याध की कहानी सुन कर वह व्याकुल हो गया। अब वह क्या करे ! ब्याध की कहानी से मालूम होता था कि उस ब्याध के सारे परिवार का जीवन इस सूअर पर निर्भर है। अगर मुनि-महाराज सूअर का पता बता देते हैं तो उन्हें जीव-ह्त्या का पाप लगता है। इसके अलावा अगर वह यह कह दे कि उसने सूअर को नहीं देखा है तो उसे झूठ बोलना पड़ता है और वह जानता था कि "नहिं असत्य-सम पातक-पुञ्ज़ा"

दोनों तरफ उसे पाप खड़ा दीखता था। इस तरह "भइ गति साँप छछूँदर केरी" बाली हालत उस मुनिजी की हो गई।

बहुत सोच-विचार के बाद मुनि ने निश्चय किया कि चाहे जो हो सूअर की जान बचानी ही चाहिए। पेट भरने के लिए तो व्याध और भी कोई उपाय ढूँढ सकता है। यों थोड़ी देर सोच कर उसने कहा-"व्याघ ! मैंने तुम्हारी बातें सुनीं। तुम पूछते हो कि मैंने सूअर को इघर जाते देखा कि नहीं ! लेकिन मैं कुछ कहने में असमर्थ हूँ। क्योंकि देखने का काम है आँखों का। लेकिन वे बोलती नहीं हैं। बोलता है मुँह। लेकिन बेचारे मुँह ने तो कुछ देखा नहीं। इसलिए वह ठीक-ठीक क्या कह सकता है ?" मुनि ने बड़ी चालाकी से जवाब दिया।

व्याध भौंचक्का सा रह गया। अब वह क्या जवाब दे ! कुछ नहीं सूझता था। लेकिन यह क्या ?

सत्यकेतु को इस तरह चालाकी से बोलते देख कर शिकारी उनकी मंशा समझ गया और अन्दर-ही-अन्दर बहुत खुश हुआ। उसके चेहरे पर मुसकान की हल्की रेखा खेलने लगी।

देखते-देखते उस ब्याध के काले शरीर का रङ्ग बदल कर चाँदनी की तरह सफेद हो गया। उसके हाथ का धनुष त्रिशूल बन गया। उसके बिखरे बाल जटाजूट बन गए। माथे पर बालचन्द्र चमकने लगा।

"अरे ! मैं यह क्या देखता हूँ ! साक्षात् भगवान शिवजी ने मुझे इस रूप में दर्शन दिया। ओह ! मैं कैसा भाग्यवान हूँ।" यह सोच कर सत्यकेतु बार-बार महादेव के चरणों में लोटने लगा ।

महादेव ने कहा-"हे सत्यकेतु। तुम्हारे अहिंसा और सत्य के बीच एक उलझन खड़ी करके मैंने तुम्हारी परीक्षा ली है। लेकिन तुमने चतुराई से सच बोल कर भी सूअर की जान बचा ली। तुम प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुए।

"देवाधिदेव ! सब आपकी कृपा है!" सत्यकेतु ने सिर झुका कर कहा।

शिवजी ने हँसते हुए कहा-"हे सत्यकेतु। तुमने आँखों से देल कर भी मुँह से जिसका पता न बताया, जानते हो वह सूअर कौन है! उधर देखो !"

इतना कहते ही झाडी में से पार्वती जी मुस्कुराती निकली और आकर शिवजी की बगल में खड़ी हो गई। सत्यकेतु ने आनन्दित होकर अनेक तरह से उनकी स्तुति की।

स्तुति से प्रसन्न होकर गौरीशङ्कर ने कहा-"हे सत्यकेतु! तुम्हारी सत्यवादिता देख कर हम दोनों तुम पर बहुत प्रसन्न हैं। तुम जो चाहो, वर मांगो।"

तब सत्यकेतु ने कहा-"भगवान ! मुझे आप के दर्शन तो मिल गए। इससे बढ़ कर मुझे और क्या चाहिए ? लेकिन जब आप बर माँगने की आज्ञा दे रहे हैं तो में इन्कार भी नहीं कर सकता। इसलिए ऐसा वर दीजिए जिससे में आगे भी सत्य और अहिंसा का पालन करता हूँ। बस, मुझे यही वर दीजिए! मुझे कुछ नहीं चाहिए।" उसने कहा।

उसकी बात सुन कर भगवान ने आनन्द से कहा- "तथास्तु"। इतने में आकाश से एक विमान नीचे उतरा और शिव-पार्वती उस पर चढ़ कर अपने लोक चले गए।
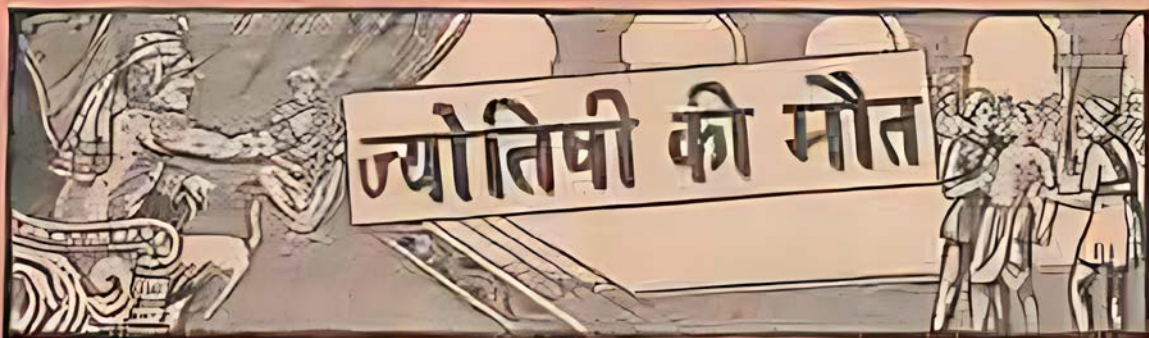
कहा जाता है कि किसी समय रणवीर नाम का एक राजा रहता था। यह बड़ा जालिम और क्रोधी था। अगर किसी पर उसे गुस्सा आता तो उसे तुरन्त मरण-दण्ड दे देता। इस तरह अनेकों निर्दोषी उसके हाथों मृत्यु को प्राप्त हुए।

उस रणवीर के दरबार में समयज्ञ नाम का एक ज्योतिषी रहता था। रणवीर का उस ज्योतिषी की बातों पर बड़ा विश्वास था। वह उसकी सलाह लिए बिना कोई काम न करता था। इसलिए उसे बड़ी सावधानी से राजा की बातों का जवाब देना पड़ता था। क्योंकि उसे मालूम था कि राजा को उस पर गुस्सा आ गया तो फिर उसकी जान की खैर नहीं।

एक बार रणवीर को पड़ोसी राजा शूरसेन को मार डालने की इच्छा हुई। इसलिए उसने समयज्ञ को बुलाकर पूछा-"मेरे मन में एक इच्छा है। वह पूरी होगी कि नहीं!"

समयज्ञ ने बिना सोचे विचारे कह दिया कि जरूर पूरी होगी। अब तक समयज्ञ ने रणवीर को जो जो बातें बताई थीं सब सच्ची उतरी थी। इसलिए रणवीर ने अब सोचा कि शुरसेन को मारने के लिए उसने जो तरकीब सोची थी वह सफल होगी। इसलिए उसने शूरसेन को अपने राज ने बुला कर उसकी बहुत खातिर की। बस, ऐसा जाहिर किया कि शुरसेन के प्रति उसके मन में बहुत प्रेम है। इस तरह धोखे में डाल कर उसको कैद करना चाहता था रणवीर।

लेकिन शूरसेन के साथ उसका मन्त्री भी आया था। वह बहुत चतुर था। बात की बात में दूसरों की नीयत भाँप लेता था। उसका नाम दूरदर्शी था। वह जानता था कि रणवीर बड़ा धोखेबाज है। इसलिए वह

उसके जाल में आता ! क्या वह इतना भी नहीं जान सकता कि उसके मालिक को धोखा देने के लिए रणवीर बनावटी प्रेम दिखा रहा है?

इसलिए उसने सोच विचार कर सही बात जान ली और चुपचाप अपने राजा की रक्षा का प्रबन्ध कर लिया।

एक दिन रणवीर टहलने के लिए शूरसेन को नगर से बहर दूर ले गया। बात की बात में उसने एक इशारा किया जिससे नजदीक में छिपे हुए उसके सैनिकों ने आकर शूरसेन को चारों ओर से घेर लिया और कैद कर लिया।

लेकिन मन्त्री दूरदर्शी छाया की तरह अपने मालिक के पीछे ही लगा हुआ था। वह अपने आदमियों के साथ वहीं आया और लड़कर अपने राजा को छुड़ा लिया। इतना ही नहीं; उसने रणवीर को कैद भी कर लिया।

आखिर जब रणवीर ने देखा कि उसकी चाल बेकार गई तो फिर हाथ जोड़ कर अपनी रिहाई के लिए गिड़गिड़ाने लगा ।

अखिर दूरदर्शी को उस पर दया आई। उसने उससे बचन ले लिया कि वह फिर कभी वैसी हरकतें न करेगा और उसे छोड़ दिया।

इस तरह अपनी चाल बेकार जाते और उलटे अपना ही अपमान होते देख कर राजा रणवीर को अपने ज्योतिषी समयज्ञ पर बड़ा क्रोध आया। उसने क्यों कहा था कि "तुम्हारी इच्छा पूरी होगी।" उसने तुरन्त ज्योतिषी की खबर लेने का निश्चय कर लिया। रातों-रात उसने ज्योतिषी को महल में बुला भेजा। उसके सैनिकों ने जाकर कहा कि राजा बुलाते हैं तो ज्योतिषी ने सारी बात ताड़ ली। उसने सिपाहियों से पूछा-"भाइयो! क्या राजा साहब बहुत गुस्से में हैं ?"

तब सिपाहियों ने कह दिया कि राजा साहब बहुत गुस्से में हैं और मुट्ठियाँ बाँध कर कमरे में बड़ी देर से टहल रहे हैं।

तब समयज्ञ ने अपने मन में सोचा- "राजाओं के दरबार में नौकरी करना बहुत मुश्किल है। क्योंकि कोई नहीं कह सकता कि राजा का चित्त कब किस तरह बदल जाएगा! तिस पर रणवीर जैसे जालिम और क्रोधी राजा के दरबार में नौकरी करना क्या है साक्षात् नरक है। किसी तरह भगवान की कृपा से आज तक मैंने अपनी जान बचाए रखी। लेकिन आज मेरी कहानी खतम। मेरी किस्मत में यहीं लिखा था। इसीलिए मैंने राजा की बात का वैसा जवाब दिया। खैर, अगर भगवान की यही इच्छा है तो मैं क्या कर सकता हूँ ! मेरे किए क्या हो सकता है। लेकिन ऐसे समय धीरज खो बैठने से कोई फायदा नहीं। इसलिए मुझे साहस करके अपने होश-हवास दुरुस्त रखने होंगे। तभी में अपनी जान बचा सकूँगा। जाना तो पड़ेगा ही । देखूँगा कि भगवान की दया से बचने की कोई सूरत नजर आती है या नहीं ?" ग्रह सोच कर वह सिपाहियों के साथ किले की ओर चला।

राजा ने अपनी आदत के मुताबिक मन का क्रोध मन में ही छिपा कर ज्योतिषी की बड़ी आवभगत की और बड़े प्रेम से बातें करना शुरू किया। लेकिन समयज्ञ अच्छी तरह जानता था कि वह इतनी आव-भगत क्यों कर रहा है। उसे मालूम था कि निकट ही कहीं सिपाहियों की नङ्गी तलवारें उसका खून पीने के लिए उतावली हो रही हैं। लेकिन वह डरा नहीं।

थोड़ी देर तक बातें करने के बाद राजा ने मधुर स्वर में पूछा-"ज्योतिषी जी! आपने अनेकों के हाथ देख कर उनके भविष्य की बातें बताईं। लेकिन क्या आपने कभी अपने भविष्य की बातें जानी है ?"

"क्यों नहीं जानता हुजूर! मैं अपना भविष्य अच्छी तरह जानता हूँ। ज्योतिषी ने निडर होकर जवाब दिया।

"तो आपकी मृत्यु कब होगी ?" राजा ने फिर पूछा। वह सोच रहा था कि ज्योतिषी कहेगा पन्द्रह या बीस साल बाद। तब वह तलवार निकाल कर उसकी गरदन पर घर देगा और पूछेगा "क्या मैं तुम्हारी बात झूठी कर दूँ ? तुम अपना भविष्य आप ही नहीं जानते हो। फिर चले हो दूसरों का भविष्य बताने।" उसके यह सवाल पूछने का यही मतलब था।

लेकिन ज्योतिष क्या निरा भोन्दू था ? उसने पाँच मिनट तक गहरा ध्यान लगा कर जवाब दिया-"राजा ! ज्योतिषियों पर पार्वती का एक शाप है। इसलिए यह नहीं कहा जा सकता कि उनकी बाणी हमेशा सच्ची होती है।"

"अपने बारे में तो यह बात और भी सच्ची है। लेकिन मेरी मौत के बारे में एक रहस्य है।

यह रहस्य मैंने किसी को नहीं बताया। यहाँ तक कि अपनी पत्नी को भी नहीं। लेकिन हजूर ने मेरी कुशल के लिए यह सवाल किया। इसलिए में टाल भी नहीं सकता। सुनिए- आपके जन्म-चक्र से साबित होता है कि मेरे मरने के दस घड़ी बाद आपकी मौत होगी। इसलिए मैं निश्चित रूप से कह सकता हूँ कि आपकी मौत से दस घड़ी पहले मेरी मौत होगी।"

यह सुनते ही रणवीर के मुँह पर हवाइयों उड़ने लगी। उसने सिपाहियों को वहाँ से हट जाने का इशारा किया। फिर उसने चार सिपाहियों को साथ देकर बड़ी हिफाजत से ज्योतिषी को घर भेज दिया। उस दिन से रणबीर ज्योतिषी की और भी खातिर करने लगा और प्राण-पण से उसकी रक्षा करने लगा।

लोग कहते हैं कि उज्जैन में शेषगुप्त नामक एक व्यापारी रहता था । उसने तमाखू का व्यापार करके बहुत सा रुपया कमाया।

एक दिन उसके मित्र अङ्गवीर नाम के एक क्षत्रिय ने आकर उससे कहा-"मित्र ! तुमने बीस मकान बनवाए। तीस लाख रुपया कमाया। जायदाद तो है ही। अब बोलो और कितना कमाना चाहते हो ! रूपये से तुम्हारा मन कब भरेगा ! क्या लोभ का कहीं अन्त भी है? कितने दिन इस तरह संसार के झञ्झटों में फँसे रहोगे ? अरे, कुछ परलोक की भी तो फक्र करो ! आओ, चलो। हम दोनों जाकर दक्षिण के तीर्थों की यात्रा कर आयें। इससे पुण्य तो मिलेगा ही साथ ही देश भ्रमण भी होगा!"

यह बात सेठ को पसन्द पड़ गई। उसने तुरन्त अपने मित्र की बात मान ली। उसने दूसरे ही दिन अपने लड़कों को बुलाकर कहा-"बच्चो ! यहाँ तक मुझसे जो हो सका मैंने तुम लोगों के लिए कमा कर दिया। पर अब में बूढ़ा हो गया हूँ। इसलिए तीर्थ करके पुण्य कमाना चाहता हूँ। इसलिए अब घर-द्वार और कारोबार का सारा भार तुम्ही को उठाना होगा।" यह कह कर उसने अपने कारोबार और जमीन-जायदाद की सारी बातें उन्हें समझा दी। फिर सेठ जी निश्चिन्त होकर तीर्थ करने चले।

सबसे पहले वे दोनों मदुरा गए। वहाँ उन्होंने मन्दिर में भगवान की पूजा की। पूजा करने के बाद सेठजी ने अपने मित्रसे पूछा-"भाई अङ्गवीर! जरा देखो तो! भगवान क्यों

नीचे की ओर दिखा रहे हैं!"

अङ्गवीर को न सूझा कि वह इस सवाल का क्या जवाब दे। लेकिन वह सच कह भी नहीं सकता था कि मैं नहीं जानता। इसलिए उसने कहा-"मित्र ! हमे भक्ति के साथ भगवान की पूजा करनी चाहिए। इस तरह की शङ्काएँ उनके बारे में मन में भी नहीं लानी चाहिए। में तुम्हारे इस सवाल का जवाब पीछे दूँगा।" यह कह कर उसने किसी तरह अपना पिण्ड छुड़ाया।

वहाँ से उन दोनों ने काञ्ची जाकर भगवान बरदराज के दर्शन किए। वहाँ भी सेठ के मन में एक शङ्का हुई। उसने पूछा-"मित्र ! मदुरा के भगवान एक हाथ ऊपर और एक हाथ नीचे किए खड़े थे। लेकिन ये भगवान क्यों दोनों हाथ पसारे खड़े हैं जैसे वे अञ्जलि बाँधना चाहते हैं ?"

अङ्गवीर इस सवाल का जवाब भी न दे सका। इसलिए उसने कहा - "भाई। मैंने पहले ही कह दिया था कि हमें इस तरह की शङ्काएँ नहीं करनी चाहिए। अगर तुम्हारा

मन इसी तरह सन्देह में पड़ा रहेगा तो फिर तीर्थ जाने से क्या लाभ? तुम जल्दी न करो। मैं कभी ये सारी बातें तुम्हें समझा दूँगा।"

मित्र की बातें सुनकर सेठ ने चुप्पी साध ली। उसने बहुत दिनों तक फिर इस तरह के सकल न किए।

आखिर वे दोनों घूमते-घानते भद्राचल पहुँचे। वहाँ फिर सेठजी के दिमाग में खलबली पैदा हुई। उसने अपने मित्र से पूछा-"भई ! पिछली बातें जाने दो। कम से कम यह तो बताओ कि यहाँ के हनुमान जी हाथ जोड़े क्यों खड़े हैं।"

तब उसके मित्र ने झल्ला कर कहा-"कहीं तुम्हारा दिमाग तो नहीं फिर गया है कि हरदम इस तरह की बेसिर-पैर की बातें करते रहते हो? क्या हम घर छोड़ कर इतनी दूर यही सब सोचने आए है ?"

बेचारा सेठ चुप रह गया। दोनों श्रीरामचन्द्रजी के दर्शन करने गए। अङ्गवीर आँखें मूँद कर उच्च स्वर से प्रार्थना करने लगा। परन्तु सेठ आँखें फाड़ फाड़ कर
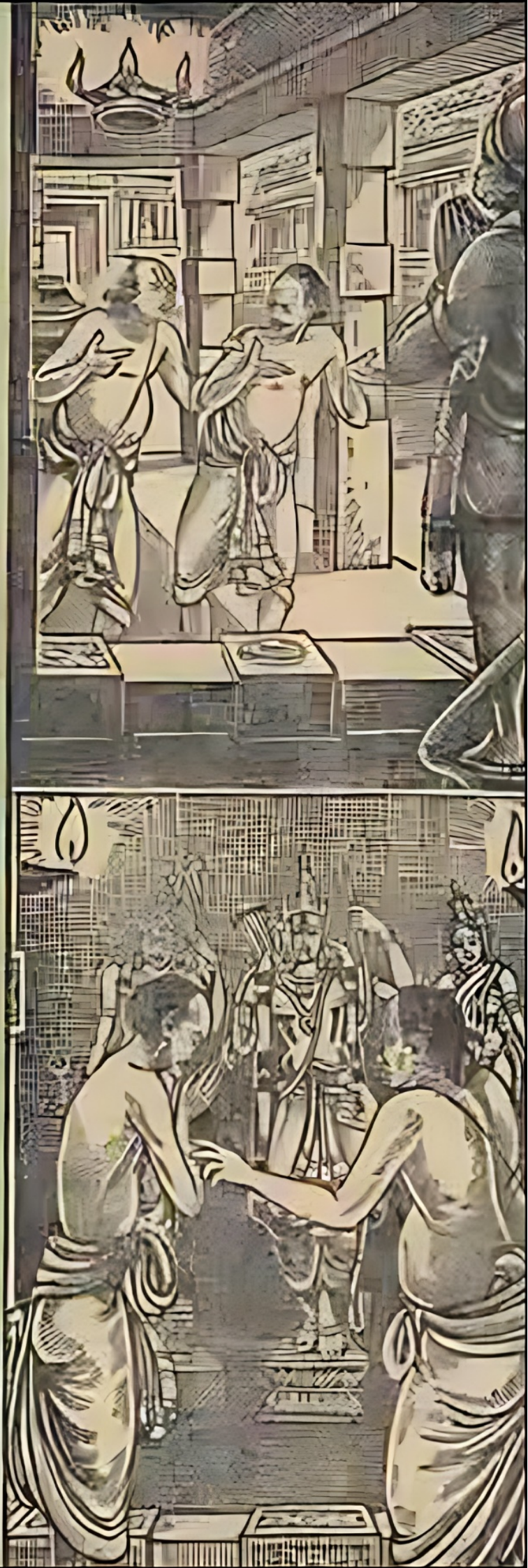
भगवान के हाथों को देखता रहा। जैसे ही मित्र की स्तुति समाप्त हुई, सेठ पास गया और पूछने लगा - "भई ! एक सवाल का तो जवाब देना ही पड़ेगा। श्रीरामचन्द्र जी दाहिने हाथ की चुटकी लगाए क्यों खड़े हैं। इस सवाल का जवाब दिए बिना तुम मुझसे पिण्ड नहीं छुड़ा सकते !" उसने जिद की। लेकिन आखिर जब उसका मित्र उसके सवाल का जवाब नहीं दे सका तो सेठ को बहुत गुस्सा आया। उसने कहा-"तुमने इस तीर्थ यात्रा में नाहक मेरा इतना रखा खर्च करवाया। तुमने कहा कि यात्रा करने से ज्ञान बढ़ता है और मन के सन्देह दूर हो जाते हैं। लेकिन इतनी जगहें घुमा कर भी मेरा एक भी सन्देह दूर न किया। तुमने मुझे धोखा दिया। इसलिए मैं न सब तुम्हारी दोस्ती चाहता हूँ और न यह यात्रा। मैं यहीं से घर लौट जाता हूँ।" यह कह कर सेठ अपने मित्र को कोसते हुए वहीं से अकेला घर लौट गया।

* * * * * *

शेषगुप्त घर तो लौट आया। लेकिन उसके मन में शङ्काएँ बनी ही रहीं। वह दिन रात इसी उधेड़-बुन में लगा रहा। यहाँ तक कि इस चिन्ता में उसका खाना-पीना भी छूट गया। आखिर उसने सोचा-"चाहे जितना खर्च करना पड़े, शङ्काओं का समाधान तो कराना ही होगा। नहीं तो मुझे चैन न मिलेगा।" यह निश्चय करके उसने शहर में चारों ओर ढिँढोरा पिटवा दिया कि जो उसके मन की शङ्काएँ दूर करेगा उसे वह मुँह माँगा ईनाम देगा।

सेठ का ढिँढोरा सुन कर उस शहर के ही नहीं, आस-पास के बड़े पण्डित लोग भी लालायित हो उठे।

आखिर सेठ ने अपने घर में पण्डितों की बड़ी सभा की और उनसे अपनी शङ्का कह सुनाई। पण्डितों ने उठ कर एक-एक करके सभी शङ्काएँ दूर करने के लिए तरह तरह के जवाब दिए। उन्होंने अनेकों शास्त्रों से उदाहरण देकर अपनी बातें साबित की। लेकिन सेठ को किसी की बातों से सन्तोष न हुआ।

इतने में उन लोगों में से रघुआ नामक एक किसान ने उठ कर कहा-"वाह! क्या इन्हीं छोटी सी बातों का जवाब देने के लिए इतने पण्डित लोग दिमाग लड़ा रहे हैं! क्या कोई सेठजी के मन की शङ्काएँ दूर नहीं क सका! अच्छा, लीजिए। मैं उनके सवालों का जवाब देता हूँ।" यह कह कर जब वह आगे चढ़ा तो पण्डित सभी हक्के-बक्के से रह गए। तब उस किसान ने सेठजी के सामने आकर कहना शुरू किया-"सेठजी! क्या आप इतने तजुर्बेकार होकर भी ये छोटी सी बातें न जान सके ! सुनिए, मदुरा के भगवान जो एक हाथ नीचे और दूसरा हाथ ऊपर किए हुए था उसका मतलब यह था-'देखो, यहाँ की जमीन

कितनी उपजाऊ है। यहाँ तमाखू की पत्ती एक गज लम्बी होती है।' वे यही सबको बताना चाहते थे।"

यह सुनते ही सेठ के मुँह पर एक मुस्कान दौड़ गई जैसे कि उन्हें सवाल का ठीक जवाब मिल गया हो।

रघुआ ने फिर कहना शुरू किया-"काञ्ची के भगवान वरदराज हाथ पसार कर यह दिखाना चाहते थे कि इस जमीन पर उगी हुई तमाखू की पत्ती इतनी चौड़ी होती है।"

यह सुन कर तो सेठ की खुशी का ठिकाना न रहा। "तो फिर भद्राचल के

हनुमान हाथ जोड़े क्यों खड़े थे ?" उसने उतावली से पूछा।

तब रघुआ ने कहा-"हनुमानजी यह कहना चाहते थे कि 'बच्चों ! देखो, उतनी लम्बी और उतनी चौड़ी पत्तियों वाले तमाखू के पौधे की जड़ इतनी मोती होती है।'"

यह सुनते ही सेठ के अचरज का ठिकाना न रहा। उसने कहा-"रघुआ ! तुम्हारी बातें मुझे पसन्द आई। लेकिन श्रीरामचन्द्र के बारे में तो तुमने बताया नहीं। वे दाहिने हाथ से चुटकी बाँधे क्यों खड़े थे ?"

"सेठजी! अब भी उसका माने आपकी समझ में न आया ? लीजिए, कहता हूँ , मर्यादा पुरुषोत्तम रामजी चुटकी बाँधे संसार में यह विदित करना चाहते थे कि उस श्रेष्ठ तमाखू से तैयार की हुई सुँघनी एक चुटकी भर नाक में खींचने से आदमी को कैलास वास का आनन्द मिलता है।"

यह सुनते ही ने उठ कर रघुआ को गले से लगा लिया और प्रशंसा करते हुए कहा-"अरे रघुआ ! मैंने बड़ी मूल की जो इतने पण्डितों को कष्ट दिया। मुझे क्या मालूम था कि तुम मेरे सब सवालों का जवाब दे सकते हो। आज मेरी सारी शङ्काएँ दूर हो गई और मुझे मात्रा करने का फल मिल गया।" यह कह कर उसने खुला को मुँह माँगा ईनाम दिया।

"सेठ के एक भी सवाल का जवाब इस लोग न दे सके। फिर हमारी पण्डिताई किस काम की ?" यह सोच कर अफसोस करते हुए पण्डित लोग मुँह लटकाए अपने-अपने घर लौट गए।

पुराने जमाने की बात है। राजस्थान में रायसिंह नाम का एक राजपूत रहता था। उसका एक ही लड़का था जिसका नाम मानसिंह था। वह रायसिंह का लड़का था, इसलिए छुटपन से ही लोग उसे रायजी मानसिंह कह कर पुकारा करते थे। इस रायजी मानसिंह को दानधर्म करने से बड़ा प्रेम था। उसके मुँह से कभी 'नहीं' न निकलता था। यहाँ तक कि लोगों में यह बात चल पड़ी थी कि मानसिंह ने छुटपन में पढ़ते समय भी ये दोनों अक्षर अपने हाथों न लिखे।

बचपन से ही उदार होने के कारण बड़े होने के बाद भी मानसिंह खूब दान-धरम करने लगा। कुछ दिन बाद जब वह अपनी जमीन-जायदाद का मालिक हो गया तब तो कहना ही क्या ? पुराण युग में बलि और कर्ण ने दान करने में जैसा नाम पाया वैसा ही नाम कलियुग में मानसिंह ने पाया।

सारे देश में यह बात प्रसिद्ध हो गई कि रायजी मानसिंह से बढ़कर दुनियाँ में कोई दानी नहीं है। रायजी मानसिंह इस तरह बहुत यश कमाने के कुछ साल बाद स्वर्गवासी हुआ। उसने दान-धर्म के द्वारा बहुत सा यश तो पाया। पर उसका खजाना खाली हो गया था। यहाँ तक कि कुछ दिन बाद उसके परिवार का समय गरीबी में कटने लगा।

इस मानसिंह के लड़के का नाम शैलसिंह था। शैलसिंह ने सेना में नौकरी करके गरीबी में भी अपनी मर्यादा बनाए रखी।

कुछ दिन बाद शैलसिंह भी स्वर्ग सिधारा। शैलसिंह का भी एक ही उड़का था जिसका नाम दादा की यादगारी में मानसिंह ही रखा गया था। गरीब हो जाने के कारण यह मानसिंह और उसकी माँ एक छोटे से घर में रहते थे और किसी तरह बड़ी मुश्किल से

अपने दिन काटते थे। पैसे की बड़ी तङ्गी थी। पर मानसिंह की माँ ने किसी तरह पेट काट कर उसके पढ़ने का इन्तजाम कर दिया था।

एक दिन मानसिंह पाठशाला में पढ़ रहा था कि एक चारण ने आकर उसके अध्यापक से बातचीत के सिलसिले में कहा- क्या कहूँ पण्डित जी ! आजकल दान-धर्म करने गला कौन है ! यशोदेवी तो रायजी मानसिंह के साथ ही स्वर्ग सिधार गई।" यह कहकर उसने एक कबिता पढ़ा।

चारण की बात सुन कर नन्हे से मानसिंह को क्रोध भी आया और जानन्द भी हुआ। उसने तुरन्त अपने हाथ का एक सोने का कङ्कण उतार कर चारण को दे दिया।

यह देख कर चारण अचम्भे में पड़ गया और पण्डितजी से पूछने लगा- "यह नन्हा सा लड़का कौन है ?"

पण्डितजी ने जवाब दिया-"यह लड़का उन्हीं रायजी मानसिंह का पोता है।"

तब चारण ने हर्षित होकर और एक कबिता पढ़ा जिसका माने था-"मैंने समझा था कि यशोदेवी स्वर्ग सिधार गई है। लेकिन नहीं, वह यहीं मानसिंह के साथ रहती है।" इस तरह वह मानसिंह की प्रशंसा करते हुए सोने का कड़ा लेकर वहाँ से चला गया।

नन्हे मानसिंह ने जोश में आकर अपने हाथ का सोने का कडा निकाल कर चारण को दे तो दिया लेकिन थोड़ी देर बाद वह मन ही मन यह सोच कर डरने लगा कि उसकी माँ उस पर गुस्सा होगी। यह सोच कर उसने अपना खाली हाथ माँ से छिपाने के लिए उस पर रूमाल लपेट लिया और शाम को डरते-डरते घर गया। घर पहुँचने

के बाद भी माँ से कतरा कर घूमने लगा। बहुत देर तक खाना खाने भी नहीं गया। उसे डर था कि माँ को कड़े की बात मालूम हो जाएगी।

आखिर माँ जब उसे खाने के लिए बुलाने गई तो उसने देखा कि हाथ पर रूमाल है। उपने समझा कि कोई चोट लग गई है। यह सोच कर उसने रूमाल खींच लिया तो देखा कि कडा नदारद। धीरे चीरे उसने बेटे से सारी बात जान ली। तब उसने गुस्से से कहा-"भोंदू कहीं का ! क्या यही तेरी उदारता है !" यह कह कर उसने उसे एक तमाचा मार दिया।

"माँ मुझे माफ करो! मैं अभी जाकर उस चारण को खोज कर अपना कड़ा बापस के आता हूँ।" मानसिंह ने रोते हुए कहा।

उसकी माँ का गुस्सा और भी बढ़ गया। उसने कहा-"रे मूरख ! मेरे कहने का मतलब यह नहीं था। रायजी मानसिंह के पोते होकर भी तुमने चारण को एक ही कड़ा दिया और एक कड़ा रख लिया। क्या यह तुम्हारी कञ्जूसी नहीं थी ? क्या

तुम्हारे बंश के नाम पर यह एक कलङ्क न था ? मुझे इसी से गुम्सा आ गया। इसलिए नहीं कि तुमने उसे कडा दिया। अच्छा, अब भी कुछ बिगड़ा नहीं। गाँव में जाकर खोजो कि वह चारण कहाँ है। उसे यह दूसरा कड़ा भी दे आओ। तभी तुम रायजी मानसिंह के पोते कहलाने लायक बनोगे।" माँ ने लड़के को फटकारा।

तुरन्त मानसिंह ने जाकर उस चारण को खोजा और उसे दूसरा कड़ा भी दे डाला। धीरे धीरे यह बात चारों ओर फैल गई और इससे उस बंश का नाम और भी बढ़ गया।

किसी समय पाटलीपुत्र पर उतुङ्गभुज नाम का राजा राज करता था। उसकी दो रानियाँ थीं। बड़ी रानी का नन्द नाम का एक लड़का था। छोटी रानी का भी एक लड़का था। राजा उतुङ्गभुज को संसार में किसी चीज़ की कमी न थी और वह अपनी दोनों रानियों के साथ सुख से दिन बिता रहा था।

इस तरह कुछ दिन बीत गए। तब न जाने क्यों राजा का प्रेम बड़ी रानी से हटकर छोटी रानी पर बढ़ने लगा। इसका यही कारण हो सकता था कि छोटी रानी बड़ी ही सुन्दरी और खूब चतुर भी थी। धीरे-धीरे उसने फुसला कर राजा का मन अपनी तरफ मोड़ लिया।

कुछ दिन बाद बात यहाँ तक पहुँच गई कि राजा छोटी रानी का गुलाम बन गया। वह उसकी हरेक इच्छा पूरी करने लगा और उसके इशारों पर नाचना ही अपने जीवन का उद्देश्य समझने लगा। अगर बात इतने ही से रुक जाती तो कोई हर्ज न था। धीरे धीरे राजा बड़ी रानी और लड़के की बात ही मूल गया। यहाँ तक कि वह अब बड़ी रानी की कोई परवाह न करता था।

राजा को छोटी रानी का मोहताज बनते देख कर नौकर-चाकर सभी छोटी रानी के इशारों पर दौड़ने लगे और बड़ी रानी के प्रति लापरवाही दिखाने लगे। आखिर नन्द की बात भी वे लोग अनसुनी कर जाने लगे।

यह सब देख कर उस बेचारे को बहुत दुख होता था। लेकिन वह कर ही क्या सकता था। वह किसी तरह मुँह लटका कर मुश्किल से अपने दिन बिताने लगा।

एक दिन की बात है कि कपड़ों का एक बड़ा व्यापारी पाटलीपुत्र नगर में आया। वह अपने साथ बहुत ही बेशकीमती साड़ियाँ लाया था। जब उस व्यापारी ने किले में

जाकर राजा के दर्शन किए तो उसने एक हजार अशर्फियाँ देकर एक रेशमी साड़ी खरीद ली और छोटी रानी को दे दी।

यह खबर बड़ी रानी को मालूम हो गई। वह बहुत दिन पहले ही समझ गई थी कि राजा का प्रेम अब उस पर नहीं रह गया। तो भी सौत को एक हजार अशर्फियों की साड़ी खरीद कर देते देख उसे बड़ा दुख हुआ।

आखिर जब उससे न रहा गया तो उसने राजा को कहला भेजा कि वह उसे भी एक ऐसी ही साड़ी खरीद दें।

यह सुन कर राजा ने आँखें लाल करके कहा-"अच्छा ! उसकी यह मजाल । जाकर कह दे कि उसके लिए चीथड़े ही काफी हैं और वह फिर कभी ऐसी फर्माइश न करे।" दासी ने जाकर यह बात बड़ी रानी से कह दी।

तब बड़ी रानी बहुत अफसोस करने लगी कि "हाय ! भगवान ! मेरी ऐसी दुर्दशा हो गई !"

तब उसकी एक दासी ने जो बहुत ही चालक थी उससे कहा-"रानीजी!
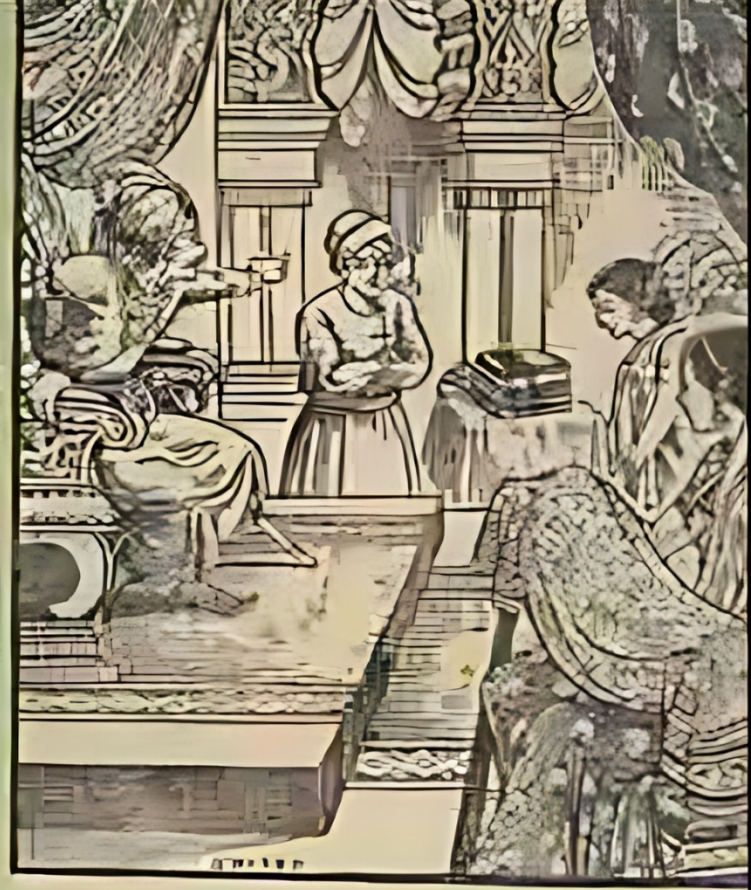
आप क्यों सोच करती हैं ! अगर आपको बैसी साड़ी पहनने की इच्छा है तो सुनिए, उसके लिए मैं एक उपाय बताती हूँ। आप व्यापारी से साड़ी के लीजिए और वह रुपया माँगेगा तो कहिए में छः महीने बाद तुम्हारा रुपया दे दूँगी।"

यह कह कर वह और भी कुछ कहना चाहती थी कि रानी ने उसे रोक कर कहा-"अरी! तेरा कहना ठीक है। हम उधार ले सकती हैं। हम पर विश्वास करके शायद व्यापारी उधार दे भी देगा। लेकिन यह तो बताओ कि छः महीने बाद हम उधार चुकाएँगे कैसे ?ऋण का बोझ सर पर लेना क्या

अच्छा है! क्या कीमती साड़ी उधार लेकर पहनने के बजाय फटे-पुराने चीथड़े पहनना ही अच्छा नहीं है। हमारे पास जो रुपया अभी नहीं है वह छः महीने के बाद कहाँ से आएगा! यहाँ कमा कर ला देने वाला तो कोई नहीं है।" रानी ने दासी की बात का विरोध किया।

तब उस चतुर दासी ने एक श्लोक पढ़ा "उतुङ्गभुज नाशो वा देश-काल विपर्ययः बणिम्बर विनाशो या नन्दो राजा भविष्यति।" यानी छः महीने के अन्दर हो सकता है कि राजा उत्तुङ्गभुज स्वर्ग सिधार जाएँ। या हो सकता है कि देश में ही क्रान्ति हो जाए। नहीं तो यह व्यापारी ही मर सकता है अथवा नन्द ही राजा बन सकता है। कौन कह सकता है कि छः महीने के अन्दर क्या से क्या हो जाएगा।

तब रानी ने कहा-"यह सब तो खैर भविष्य की बातें हैं। लेकिन सुनो, महाराज का प्रेम खोकर मुझे कीमती साड़ी पहनने से भी क्या आनन्द मिलेगा ! क्या इससे अच्छा नहीं कि में गरीबी में ही किसी तरह अपने दिन काटूँ। " यों वह बड़े विरक्त भाव से बातें करने लगी।

तब उस दासी ने फिर कहा- "मालकिन ! जब तक महाराज जिन्दा हैं और आपका सुहाग बना हुआ है तब तक तो आपको सिङ्गार-पटार करना ही होगा। अगर वे दौर्भाग्यवश मर ही गए तो राज जापके लड़के के हाथ में आ जाएगा। तब आप व्यापारी का कर्ज सूद सहित चुका सकती हैं। तब अगर आप यह साड़ी पहनना न चाहें तो अपनी बहू को दे दीजिएगा। अगर यह सब न हो तो राजा का मन ही कुछ दिन बाद बदल सकता है। इस तरह जितना भी सोचती हूँ उतना ही मेरा निश्चय होता

जाता है कि आपको यह साड़ी खरीद लेनी चाहिए।

आखिर दासी की बात रानी ने मान ली। उसके मन में सौतिया डाह की आग लगी हुई थी और वह अपनी सौत को नीचा दिखाने के लिए वह साड़ी खरीदना चाहती थी। इसके अलावा औरतें स्वभाव से ही कपड़े लत्ते, गहने-जेवर बगैरह बहुत चाहती हैं। इन सब कारणों से उसे दासी की बात माननी पड़ी। उसने दासी को भेज कर व्यापारी को बुलवाया। छः महीने की मीयाद पर व्यापारी ने साड़ी दे दी। रानी से सेठ ने हुण्डी लिखवा ली।

रानी ने जब वह साड़ी पहनी तो उसकी खुशी का ठिकाना न रहा। अपनी माँ को खुश देख कर नन्द भी मन ही मन बहुत हर्षित हुआ।

उस दासी के लिए तो यह खुशी की बात भी ही। क्योंकि उसी की सलाह से रानी ने वह साड़ी खरीदी थी।

साड़ी खरीदे अभी चार महीने भी न हुए थे कि राजा उत्तुङ्गभुज बीमार पड़ा। दवा दारू का कोई असर न हुआ। बीमारी दिन दिन बढ़ती गई।

आखिर राजा ने समझ लिया कि उसकी मौत नजदीक आ गई है। तब उसने अपने मन्त्रियों को बुला कर कहा-"मन्त्री गण ! मेरी मृत्यु के बाद राजगद्दी मेरी छोटी रानी के लड़के को मिले। यही मेरी एक मात्र इच्छा है। मैं आशा करता हूँ कि तुम लोग जरूर उसे पूरी करोगे।" यह कह कर राजा ने अपनी आँखें मूँद ली और उसके प्राण पखेरू उड़ गए।

राजा के मरने के बाद जब मन्त्रियों और दरबारियों ने एकत्र होकर विचारा तो उन्हें मृत राजा की इच्छा बिलकुल ही अनुचित

जान पड़ी। क्योंकि नन्द पटरानी का इकलौता लड़का था। शास्त्रों के अनुसार राज्य पर उसी का हक था। इसके अलावा राज के लोग भी सभी उसी से ज्यादा प्रेम करते थे। विद्या विनय, उदारता, सुन्दरता, शूरता आदि सभी गुण नन्द में मूर्तिमान थे।

छोटी रानी का लड़का बहुत छोटा भी था और राज की बागडोर सम्हाल भी न सकता था। यह सब सोचने के बाद राजा की इच्छा पूरी करने का उनका मन न हुआ। आखिर उन्होंने निश्चय किया कि नन्द ही राजा बनने योग्य है। यह सोच कर उन्होंने उसी का राज तिलक किया।

नन्द ने गद्दी पर बैठते ही पहले उस व्यासरी को बुलवाया और उसे अपनी माँ की साड़ी का दाम दे दिया। इतना ही नहीं, उसने उसे एक हजार अशर्फियों का ईनाम भी दिया।

इस तरह उस चतुर दासी के वचन के अनुसार ही नन्द छः महीने के अन्दर राजा हो गया। दासी के मुँह से निकली हुई बात में इतना प्रभाव था। इसलिए वह धीरे धीरे एक कहावत बन गई और उसका खूब प्रचार हो गया।

वास्तव में कोई नहीं कह सकता कि भविष्य में किसकी कैसी दशा होगी। इसलिए अब भी जब हम भविष्य की अस्पष्टता के बारे में कुछ कहना चाहते हैं तो झट मुँह से निकल जाता है-"नन्दो राजा भविष्यति।"
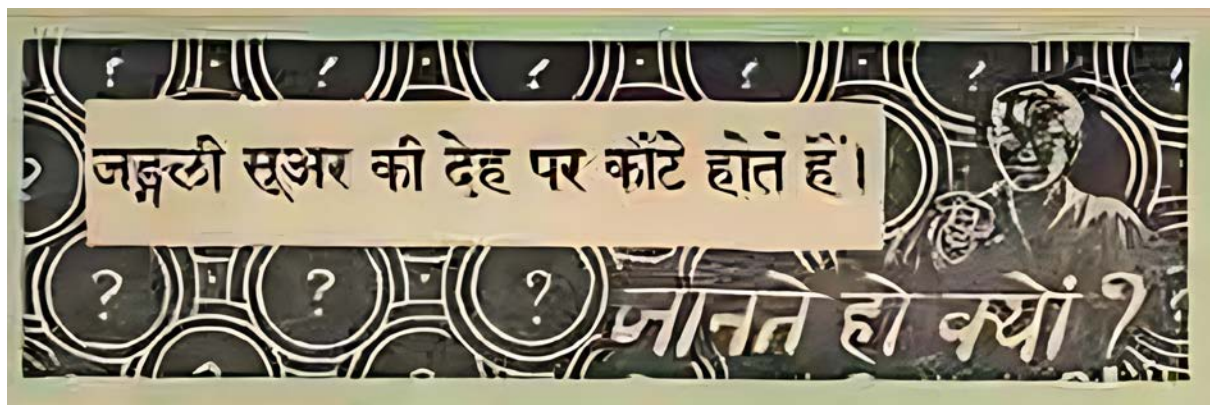
एक बार पाँच पाण्डबों में से मझले भाई अर्जुन पाशुपत के लिए भगवान शिवजी का ध्यान करना शुरू किया। आखिर उसके घोर तप से प्रसन्न होकर महादेवजी ने अर्जुन को दर्शन देने का निश्चय किया ।

यह बात पार्वती को मालूम हो गई और उन्होंने अपने पति से कहा- "देव ! में भी तुम्हारे साथ चलना चाहती हूँ। मैंने सुना है कि अर्जुन भारी बीर और अद्भुत धनुर्धारी है। में उसकी वीरता-धीरता देखना चाहती हूँ।'

शिवजी ने उनकी बात मान ली। दोनों ने किरात का वेश बनाया और अपने गणों के साथ उस जङ्गल में पहुँचे जहाँ अर्जुन तप कर रहा था। इतने में उन्हें एक जङ्गली सूअर दिखाई दिया। वे उसका पीछा करने लगे। वह सूअर भयङ्कर घर्घर ध्वनि करता हुआ अर्जुन के आश्रम की तरफ भागा।

उस कोलाहल के कारण अर्जुन का ध्यान भङ्ग हो गया। उन्होंने क्रोध से निकट ही पड़ा हुआ गाण्डीब उठाया और सूअर पर तीरों की बौछार कर दी। उस सूअर का अंगुल अंगुल शरीर तीरों से छिद गया।

इतने में किरान-वेशधारी शिव-पार्वती वहाँ आ पहुँचे। "तुम कौन होते हो हमारे शिकार पर तीर चलाने वाले ?" भगवान ने अर्जुन से पूछा।

"क्या मजेदार सवाल है ! सुअर ने मेरा ध्यान भङ्ग किया और मैंने उसे तीरों से बीन्ध दिया। अर्जुन ने जवाब दिया।

यों ही बात बढ़ गई और झगड़ा शुरू हो गया। अर्जुन और शिव अपने अपने हथियार चलाने लगे। उस युद्ध में अर्जुन ने अपनी पूरी कुशलता के साथ गाण्डीब का प्रयोग किया। यह देख कर पार्वती मुग्ध हो गई। थोड़ी देर बाद शिवजी ने किरात रूप

छोड़ कर अर्जुन को दर्शन दिए और उसकी वीरता की बड़ी प्रशंसा की। पाशुपात पाकर अर्जुन हतार्थ हो गया।

झाडी में घायल पड़ा हुआ सूअर भयङ्कर पीड़ा से कराह रहा था। उसे देख कर पार्वती को बड़ी दया आई।

उस सूअर ने उनसे कहा-"माँ ! तीरों के मारे मेरा सारा बदन छलनी हो गया है। अब मैं जी कर क्या करूँगा ? इसलिए कृपा करके मेरे बदन में से तीर निकाल लो जिससे जल्दी मेरे प्राण निकल जाएँ और मुझे इस पीडा से छुटकारा मिले। मैं तुम्हारा बड़ा कृतज्ञ रहूँगा।" उस सुगर ने बड़े दीन-स्वर में कहा।

यह सुन कर शिवजी ने कहा- "तुम्हारे शरीर में जो तीर लगे हुए हैं, वे मामूली तीर नहीं हैं। वे अर्जुन के गाण्डीव से निकले हुए तीर हैं। किस की मजाल है जो उन्हें उखाड़ दे ? इसलिए जाओ! मैं तुम्हें ऐसा बर देता हूँ जिससे तुम्हारे बदन से तीर निकालने की जरूरत ही न हो। तुम्हारे बदन पर के वे तीर काँटे बन जाएँगे। इस तरह आज से सूअरों में तुम्हारी जात ही अलग हो जाएगी। इन काँटों से तुम्हारी सुन्दरता तो बढ़ेगी ही। साथ ही ये काँटे दुश्मनों से तुम्हारी रक्षा करने में भी काम आएँगे। इसलिए अब तुम्हें डरने की कोई जरूरत नहीं।" यह कह कर उन्होंने थोड़ा सा गङ्गा जल लेकर उस पर छिड़क दिया।

तुरन्त उस सूअर की आह कराह दूर हो गई और उसकी देह के तीर काँटे बन गए। उस दिन से जङ्गली सूअरों की जात ही अलग हो गई।